सुविहिताग्रणी गणाधीश सुखसागरजी का जीवन परिचय

[लेखक—अगरचन्द नाहटा]

महापुरुषों का नाम स्मरण ही महामाङ्गल्यप्रद माना जाता है। जन साधारण के जीवनस्तर को ऊँचा उठाने में महापुरुषों का जीवनचरित्र जितना उपयोगी होता है, अन्य कोई भी साधन नहीं होता। शास्त्रवाक्य मार्ग दिखाते हैं और उन आदर्शों के उदाहरण महापुरुष अपनी जीवनी द्वारा उपस्थित करते हैं। अतः उनसे अधिक एवं सद्यः प्रेरणा मिलना स्वाभाविक है। यही कारण है कि प्रत्येक आस्तिक व्यक्ति महापुरुषों के नाम स्मरण, भक्ति एवं पूजादि द्वारा अपने को कृतकृत्य होने का अनुभव करता है।

जैन धर्म में समय-समय पर अनेक महापुरुष हुए हैं। जिनमें से कइयों का प्रभाव तो अपने समय तक ही अधिक रहा और कइयों के दीर्घकाल तक उनके शिष्य सतंतिद्वारा लोकोपकार होता रहा है। यहाँ जिन महापुरुषों का परिचय कराया जा रहा है वे द्वितीय प्रकार के हैं। उनकी पुण्य परम्परा में आज भी दर्जन से अधिक साधु व २०० के लगभग साध्वियों का विशाल समुदाय विद्यमान है। जो कि स्थान-स्थान पर विहार कर स्वपरोपकार कर रहे हैं। इन महापुरुष का शुभ नाम मुनिवर्य सुखसागरजी था। श्वे० जैन समाज के सुविहित शिरोमणि जिनेश्वरसूरिजी की संतति खरतरगच्छ के नाम से प्रसिद्ध है। इस गच्छ में १८वीं शती में जिनभक्तिसूरिजी आचार्य हो चुके हैं। उनके शिष्य प्रीतिसागरजी के शिष्य अमृतधर्म के शिष्य क्षमाकल्याणजी १९वीं शती के नामांकित विद्वानों में से है। आपने तत्कालीन शिथिलाचार से अपने को ऊँचा उठाकर सुविहित मार्ग में नवचेतना का संचार किया था। जनसाधारण के उपकार के लिये आपने अनेक उपयोगी ग्रन्थों की रचना की थी। आपके शिष्य धर्मानन्दजी के शिष्य राजसागरजी से चरित्रनायक ने दीक्षा ग्रहण की थी और उनके शिष्य ऋद्धिसागरजी के शिष्य के रूप में आप प्रसिद्ध हैं।

स्वर्गीय मुनिवर्य श्रीसुखसागरजी का जन्म सं० १८७६ में सरस्वती पत्तन (सरसा) नामक स्थान में हुआ था। आपके पिताजीका नाम मनसुखलालजी व मातुश्री का नाम जेती बाई था। ओसवाल जाति के दूगड़ गोत्र के आप रत्न थे। आपके यौवनावस्था में प्रवेश से पूर्व ही माता पिता दोनों का वियोग हो गया। अतः अपनी बहन के आग्रह से ये जयपुर में आ गये, व गोलछा माणिकचन्दजी लक्ष्मीचन्दजी की सहायता से किरियाणे का व्यापार करने लगे। थोड़े समय में ही अपनी व्यवहार कुशलता से आप उनके यहां मुनीम जैसे उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर सुशोभित हो गये।

बाल्यावस्था से ही आपकी रुचि धर्मध्यान की ओर विशेष थी। इसी से पिताजी के अनुरोध करने पर भी आपने विवाह करना स्वीकार नहीं किया था व सामायिक, पूजा, तपश्चर्यादि में संलग्न रहते थे। सं० १९०६ में जयपुर में मुनि श्रीराजसागरजी व ऋद्धिसागरजी का चातुर्मास हुआ। फलतः आपकी धर्मभावना के सींचन का शुभन सुयोग प्राप्त हो गया। अपनी चढ़ती भावना से आपने मुनिश्री से साधु-धर्म स्वीकार करने की उत्कंठा प्रकट की। उन्होंने भी आपको वैराग्यवान व दीक्षा की उत्कट भावना वाला ज्ञात कर चातुर्मास होने पर भी आपके आग्रह को स्वीकार किया। नियमानुसार अपने निकट सम्बन्धियों से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

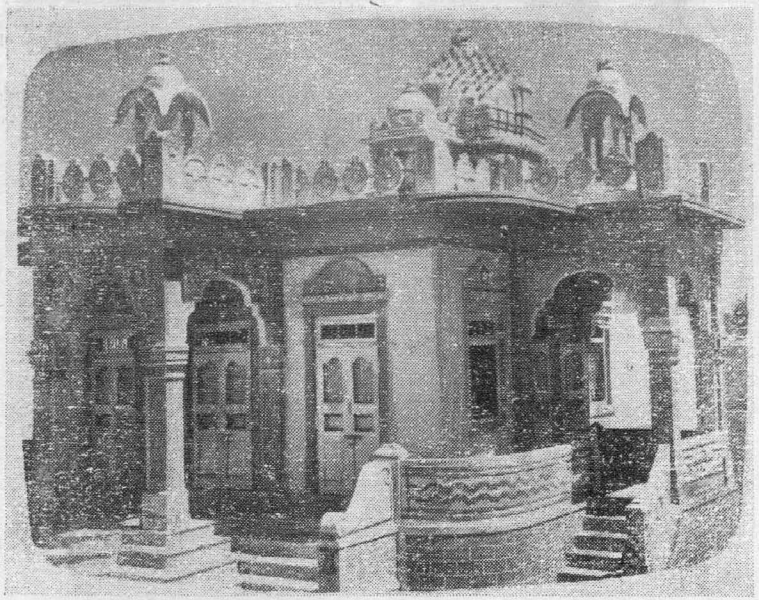

भद्रेश्वर (कच्छ) तीर्थ की दादाबाड़ी

छोटा दादाजी, दिल्ली

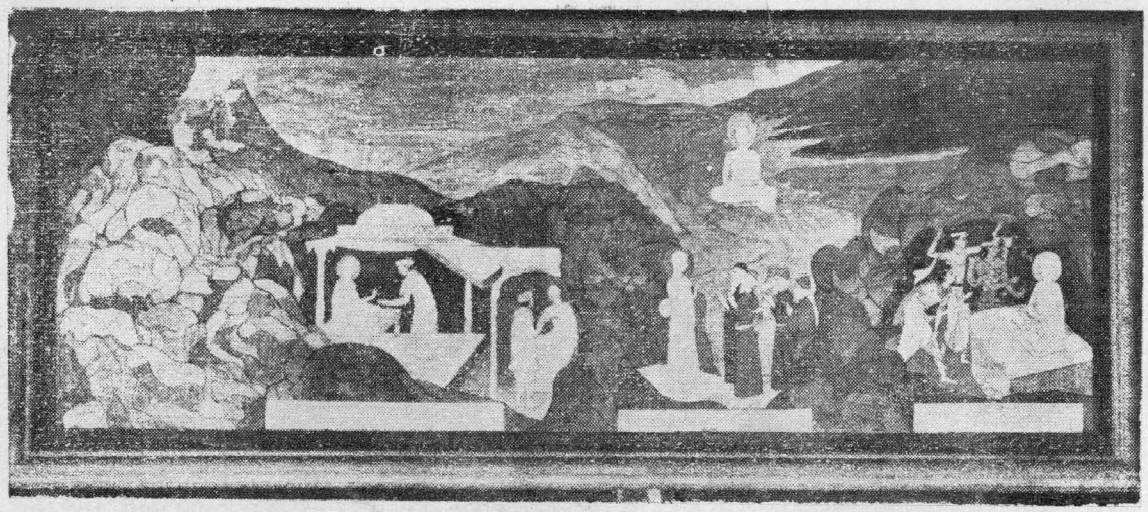

श्रीइन्द्रदूगड़ चित्रित, श्रीजिनदत्तसूरिजी के जीवनवृत्त चित्र, कलकत्ता दादाबाड़ी

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

शासन प्रभाविका प्रवर्त्तिनी श्री विचक्षण श्री जी महाराज

प्रवर्तिनीजी श्री वल्लभ श्री जी महाराज

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

चारित्र धर्म स्वीकार करने की अनुमति प्राप्तकर सांवत्सरिक क्षमत क्षामणा के मांगलिक पर्व के दिन गुरुजी के पास आपने दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा का महोत्सव उपर्युक्त गोलछा परिवार ने किया। मुनिवर राजसागरजी ने प्रव्रज्या ग्रहण कराते हुए आपको मुनिश्री ऋद्धिसागरजी का शिष्य घोषित किया।

साध्वाचार की समुचित शिक्षा के अनन्तर मार्गशीर्ष मास में आपकी बड़ी दीक्षा भी हो गयी। अब आप जैन सिद्धान्त के विशेष अध्ययन में संलग्न हो गये और थोड़े ही समय में जैनागमों में दक्षता प्राप्त कर ली।

आगमवाचना के समय शास्त्रोक्त साधु जीवन से अपने वर्तमान जीवन की तुलना करने पर शिथिलता नजर आई। अतः साध्वाचार को खप होने से आपने मुनि पद्मसागरजी व गुणवन्तसागरजी के साथ गुरुजी से अलग होकर सं० १९१८ सिरोही में क्रिया-उद्धार कर लिया। तदनन्तर सुविहित मार्ग का प्रचार व तप संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए सर्वत्र विहार करने लगे। अनुक्रम से तीर्थाधिराज शत्रुंजय की यात्रा करके आप फलौदी पधारे।

इधर साध्वीजी रूपश्रीजी की शिष्या उद्योतश्रीजी शिथिलाचार से सम्बन्ध-विच्छेद कर सं० १९२२ में फलौदी आयी। और आपको योग्य सुविहित गुरु जानकर आपसे वासक्षेप लेकर आज्ञानुवर्तिनि हो गई। सं० १९२४ में लक्ष्मी बाई दीक्षित होकर उनको लक्ष्मीश्रीजी के नाम से शिष्या हो गयीं। सं० १९२५ में भगवानदास श्रावक ने गुरुश्री से दीक्षा ग्रहण की। और भगवानसागरजी के नाम से वे प्रसिद्ध हो गये। मुनि पद्मसागरजी फलौदी पधारने के पूर्व ही अलग हो चुके थे अतः ३ साधु और ३ साध्वी का आपका समुदाय हुआ।

एक बार आपने स्वप्न में मनोहर वाटिका में बछड़ों के झुण्डसह गायों को विचरते हुए देखा जिसके फलस्वरूप आपने भविष्य में साध्वी समुदाय का विस्तार होना बताया और आपकी यह भविष्यवाणी पूर्णरूपसे सिद्ध हुई।

जैनागमों के निरन्तर अध्ययन से आपके ज्ञान की वृद्धि हुई और जन साधारण के सुबोध के लिये आपने जीवाजीव, राशिप्रकाश (१९१० में सैलाने से प्रकाशित) भाषा कल्पसूत्र, १०८ बोल, ६२ मार्गणायंत्र, दशक, शतक, अष्टक एवं कई अन्य बोल-चाल के ग्रन्थों की रचना की।

इस प्रकार सुविहित मार्ग का पुनरुद्धार कर धर्मप्रचार करते हुए ३६ वर्ष ४ महीने १४ दिन का निर्मल संयम पालन कर सं० १९४२ के माघ वदि ४ शनिवार के प्रातः काल फलौदी में अनशन द्वारा आप ध्यानपूर्वक स्वर्ग सिधारे।

आप बड़े पुण्यशाली महापुरुष थे। यद्यपि आपकी विद्यमानता में ५ साधु व १४ साध्वियों का समुदाय ही हुआ पर वह क्रमशः वृद्धि को प्राप्त हुआ और थोड़े समय के अनन्तर ही साध्वियों की सं० २०० के लगभग पहुँच गई है।

बीसवीं शती के खरतरगच्छीय विद्वान ग्रन्थकार व क्रियापात्र योगिराज चिदानन्दजी ने शिवजीराम से अलग होकर पूज्य सुखसागरजी महाराज से अजमेर में उपस्थापना दीक्षा ग्रहण की थी। इससे उस समय आपके विशुद्ध चारित्र की ख्याति कितनी अधिक थी, इसका भली भाँति परिचय मिलता है।

ऐसे महापुरुष जैन संघ में अधिकाधिक अवतरित हों यही हार्दिक अभिलाषा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org